संस्कृत साहित्य सौरभ
दशकुमार-चरित
१

संस्कृत-साहित्य-सौरभ



१४

दण्डी-कृत

# दशकुमार-चरित

भाग १

●



श्री कृष्णाचार्य
द्वारा
कथासार

●

विष्णु प्रभाकर
द्वारा
सम्पादित

●

१९५६

सत्साहित्य-प्रकाशन

प्रकाशक
मार्तण्ड उपाध्याय,
मन्त्री, सस्ता साहित्य मंडल
नई दिल्ली



दूसरी बार : १९५६
मूल्य
छः आना

मुद्रक
नेशनल प्रिंटिंग वर्क्स
दिल्ली
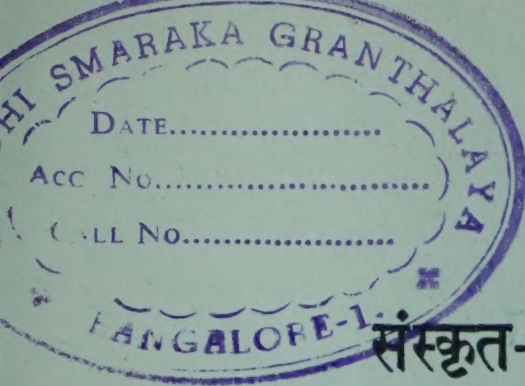
# संस्कृत-साहित्य-सौरभ

हमारा संस्कृत-साहित्य अत्यन्त समृद्ध है। भारतीय जीवन का शायद ही कोई ऐसा अंग हो जिसके संबंध में मूल्यवान सामग्री का अनंत भंडार संस्कृत-साहित्य में उपलब्ध न हो। लेकिन खेद की बात है कि संस्कृत से अपरिचित होने के कारण हिन्दी के अधिकांश पाठक उससे अनभिज्ञ हैं। उनमें जिज्ञासा है कि वे उस साहित्य से परिचय प्राप्त करें; परंतु उसका रस वे हिन्दी के द्वारा लेना चाहते हैं।

पाठकों की इसी जिज्ञासा को देखकर संस्कृत के महाकवियों, नाटककारों आदि की प्रमुख रचनाओं को छोटी-छोटी कथाओं के रूप में हिन्दी में प्रस्तुत कर रहे हैं।

पुस्तकों की भाषा बहुत सरल बनाने का प्रयत्न किया गया है। पाठकों की सुविधा के लिए टाइप भी मोटा लगाया गया है।

इन पुस्तकों का सम्पादन हिन्दी के सुलेखक श्री विष्णु प्रभाकर ने बड़े परिश्रम से किया है।

इस माला में कई पुस्तकें निकल चुकी हैं और आगे निकल रही हैं। आशा है, हिन्दी के पाठकों को इन पुस्तकों से संस्कृत-साहित्य की महान् रचनाओं की कुछ-न-कुछ झांकी अवश्य मिल जायगी। पूरा रसास्वादन तो मूल ग्रंथ पढ़कर ही हो सकेगा। यदि इन पुस्तकों के अध्ययन से मूल पुस्तक पढ़ने की प्रेरणा हुई तो हम अपने परिश्रम को सफल समझेंगे।

## दूसरा संस्करण

इस माला की पुस्तकें बहुत ही लोकप्रिय हो रही हैं और हमें हर्ष है कि कुछ पुस्तकों का चन्द महीनों में दूसरा संस्करण प्रकाशित हो रहा है। आशा है कि भारतीय संस्कृति और साहित्य के प्रेमी पाठक इन पुस्तकों को और भी चाव से अपनावेंगे।

—मंत्री

# भूमिका

'दशकुमार-चरित' के लेखक महाकवि दण्डी का नाम संस्कृत साहित्य में बड़े आदर से लिया जाता है फिर भी उनके बारे में हमारा ज्ञान बहुत ही सीमित है। उनके समय के बारे में बहुत मतभेद है। अन्तिम खोजों के आधार पर वह ७०० ई० से पहले ही हुए होंगे। विद्वानों का मत है कि उनका काल पांचवीं-छठी सदी होना चाहिए।

'दशकुमार-चरित' का जो रूप आज मिलता है वह पूरा दण्डी का लिखा हुआ नहीं है। उन्होंने उसे अधूरा छोड़ दिया था। बाद में किन्हीं दो लेखकों ने 'पूर्व पीठिका' और 'उत्तर पीठिका' लिख कर उसे पूरा किया। इन पीठिकाओं और दण्डी-चरित-कथा में काफी अन्तर है। इस कथासार में भी यह उलझन पाठकों को मिलेगी। उदाहरण के लिए आरम्भ में प्रमति को सुमति का पुत्र कहा है, पर जब प्रमति अपनी कथा कहता है तो वह अपने को कामपाल व तारावली का पुत्र बताता है। इस ग्रंथ में कवि ने तत्कालीन समाज के निचले स्तर का चरित्र खींचा है। जादूगर, चोर, जुआरी, पाखण्डी, साधु, वेश्याएं, कामुक राजकुमार व राजकुमारियां, धोखेबाज व्यापारी और सरकारी कर्मचारी सभी इसमें हैं। तत्कालीन मूढ़ विश्वासों का उल्लेख भी हुआ है। ब्राह्मण, जैन, बौद्ध सभी पर उसने चोट की है। कवि शायद इस गन्दी समाज-व्यवस्था का भण्डाफोड़ करके आदर्श समाज की कल्पना हमारे सामने रखना चाहता था। विदर्भ के राजा पुण्यवर्मन् का चरित्र इस बात का साक्षी है। कुछ भी हो चरित्र-चित्रण बहुत सशक्त और प्यारा है। शैली मनोहारी और ओजभरी है। भाषा सीधी-सादी है। संस्कृत गद्य पर कवि का पूर्ण अधिकार है। इसलिए प्रकृति व पुरुष सभी के बर्णन बड़े अनूठे बने हैं। दण्डी अपने पद-लालित्य के लिए ही प्रसिद्ध है।

पूर्वपीठिका में छ: उच्छ्वास हैं, जिनमें प्रधान पात्र राजवाहन और अवन्तिसुन्दरी के विवाह तथा सोमदत्त व पुष्पोद्भव की आपबीती का वर्णन है। 'दशकुमार-चरित' में सात उच्छ्वास हैं, जिनमें शेष सात कुमारों की आपबीती है। अन्त में छोटी-सी उत्तारपीठिका है जिसे कथा का उपसंहार कह सकते हैं। पाठक इस अपूर्व कथा का पूरा रस ले सकें, इसलिए हम इसे दो भागों में प्रस्तुत कर रहे हैं। —सम्पादक
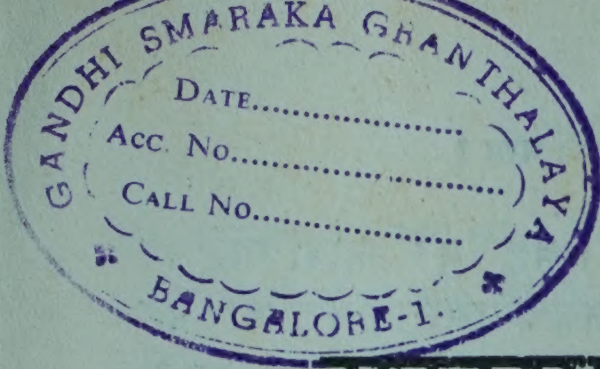
# दशकुमार-चरित

## भाग १

## १. जन्म और शिक्षा

पुराने समय में मगध देश में पुष्पपुरी या पाटलिपुत्र नाम की एक सुन्दर और लम्बी-चौड़ी नगरी थी। इस नगरी में राजहंस नाम के एक राजा राज करते थे। वीरता और रूप के कारण राजहंस का बड़ा नाम फैला था। वह बड़े दानी भी थे और उनके राज में हमेशा यज्ञ आदि धर्म के काम होते रहते थे। राजहंस की पत्नी का नाम बसुमती था। वह भी बहुत सुन्दर और बुद्धिमती थी। इस प्रतापी राजा के तीन मंत्री थे, धर्मपाल, पद्मोद्भव और सितवर्मा। तीनों मंत्री राज-काज और पढ़ने-लिखने में बड़े चतुर थे। कठिन-से-कठिन कामों को वे बड़े धीरज और विवेक से पूरा कर लेते थे। इन गुणों के कारण लोग इन्हें देवगुरु वृहस्पति से भी बड़ा मानने लगे थे।

इनके कई पुत्र थे। सितवर्मा के पुत्रों का नाम था सुमति और सत्यवर्मा। पद्मोद्भव के सुश्रुत और रत्नोद्भव नाम के दो पुत्र थे तथा धर्मपाल के तीन बेटे थे सुमंत्र, सुमित्र और कामपाल। इनमें सत्यवर्मा की रुचि धर्म की ओर थी। वह तीर्थयात्रा पर निकल गया। कामपाल

का स्वभाव बड़ा खराब था। वह बुरे आदमियों की सोहबत में रहने लगा और सबके समझाने पर भी वह दुनिया की सैर करने चला गया। रत्नोद्भव व्यापार के काम में बड़ा चतुर था। वह समुद्र-पार चला गया। दूसरे पुत्र अपने काम में अच्छे निकले। तीनों बूढ़े मंत्री जब मर गए तब वे लोग उनके स्थान पर काम-काज करने लगे।

एक बार मगध के राजा राजहंस ने मालवा पर चढ़ाई की। मालवा के राजा मानसार भी बड़े मान वाले थे, पर इस लड़ाई में वह हार गए और उनकी सारी सेना मारी गई। राजा भी पकड़ लिये गए। बाद में मगध के राजा ने दया करके उन्हें छोड़ दिया और उनका राज भी लौटा दिया। किन्तु कुछ समय बाद राजहंस को पता लगा कि मानसार ने तपस्या करके भगवान् शंकर से एक ऐसी गदा प्राप्त कर ली है, जिसका वार कभी खाली नहीं जाता। इस गदा को पाकर वह बड़े घमण्डी हो गए हैं और मगध पर हमला करने को तैयार हैं। यह सुनकर राजा ने मंत्रियों को सलाह के लिए बुलाया। मंत्रियों ने कहा कि राजा मानसार के पास शिवजी की गदा है इसलिए उससे लड़ना ठीक नहीं होगा। किले में बैठकर अपना बचाव ही करना चाहिए। लेकिन राजा न माने। बोले, "मैं युद्ध न करना किसी भी तरह ठीक नहीं समझता।" उसने मानसार का सामना करने का निश्चय किया। उधर मालवा की सेना भी मगध राज में घुस आई। मगधों और मालवों का यह

युद्ध बहुत भयंकर था। इस युद्ध को देखने के लिए, मनुष्यों की कौन कहे, देवता भी आये और देख-देख कर अचरज करने लगे।

राजहंस युद्ध करने में बड़े कुशल थे। उनकी बराबरी इन्द्र से की जाती थी, लेकिन मालवपति मानसार ने इस बात की कोई परवा न की और अवसर पाकर उसने राजहंस पर शिवजी की दी हुई गदा से हमला किया। राजहंस इसके लिए तैयार थे। उन्होंने अपने तेज बाणों से उसे बीच ही में काट डाला। फिर भी उस गदा से उनके रथ का सारथी मारा गया। वह बेसुध होकर रथ में गिर पड़े और रास छूटे हुए घोड़े रथ को लेकर जंगलों में भाग गये। इस प्रकार मालवा के राजा की जीत हुई और उन्होंने विशाल मगध-राज पर कब्जा करके पाटलिपुत्र पर अधिकार कर लिया।

महारानी पहले ही विन्ध्याचल के जंगलों में भेज दी गई थी। राजा के रणभूमि से चले जाने के बाद उनके मंत्री कुछ देर तो लड़े, पर वे भी हार गये और किसी तरह समाचार देने के लिए महारानी बसुमती के पास पहुंचे। अपनी सारी सेना नष्ट हो जाने और मगधराज के लापता होने की बात सुनकर महारानी बड़ी दुखी हुई। वह भी मरने को तैयार हो गई, परन्तु मंत्रियों के समझाने पर उस समय उन्हें अपना विचार छोड़ना पड़ा। महाराज का किसी को ठीक-ठीक पता भी तो नहीं था। शायद वह जीवित ही हों। फिर उनके पुत्र होनेवाला था।

इस तरह उस समय तो वह चुप हो गईं, पर जब रात होने पर सब सो गए तो उनका दुःख फिर उमड़ पड़ा। इस बार वह अपने को नहीं सम्भाल सकी और चुपचाप उठकर अकेले एक ओर चल दी। अचानक वह उस जगह आ पहुंची, जहां राजा राजहंस के युद्ध के मैदान से भागे हुए रथ के घोड़े आकर टिके थे। वह मरने के लिए तैयार होकर आई थी। एक पेड़ की डाल पर उन्होंने अपना दुपट्टा बांधकर फांसी का फन्दा तैयार किया और आखिरी बार महाराज की याद करके उन्हें पुकारने लगी। उनके इस करुण विलाप को सुनकर जंगल गूंज उठा। महाराज का रथ वहां से दूर नहीं था। रात की शीतलता और शान्ति के कारण उन्हें धीरे-धीरे होश आ रहा था। उन्होंने रानी का करुण विलाप सुना। वह तुरन्त उस आवाज को पहचान गए और धीमे स्वर में उसे पुकारने लगे। रानी ने वह पुकार सुनी तो हैरान होकर उधर दौड़ी। चांदनी रात थी। महाराज को पहचानते उसे देर न लगी। कुछ देर तो इस अपार खुशी के कारण वह बोल न सकी। फिर आवाज देकर उन्होंने पुरोहित और मंत्रियों को भी वहां बुला लिया। वे सब महाराज को पाकर बड़े प्रसन्न हुए। उन्होंने तुरन्त उनके घावों की मरहम-पट्टी की।

कुछ दिन में वह बिलकुल ठीक हो गए, पर हार हो जाने के कारण वह बड़े दुखी रहते थे। एक दिन, आगे क्या और कैसे करना चाहिए, इस बारे में सलाह

करने वह महर्षि वामदेव के पास गये। इन्हीं महर्षि ने राजा को बताया कि उनके एक अत्यन्त प्रतिभावान पुत्र उत्पन्न होगा। वह वैरी का नाश करेगा। उसकी राह देखनी चाहिए।

ऐसा ही किया गया और समय पाकर राजहंस के घर सचमुच शुभ लक्षणों वाले पुत्र का जन्म हुआ। उसका नाम राजवाहन रखा गया। राजवाहन के साथ-साथ मंत्रियों के भी पुत्र हुए। मंत्री सुमति के प्रमति, सुमंत्र के मित्रगुप्त, सुमित्र के मंत्रगुप्त और सुश्रुत के लड़के का नाम विश्रुत रखा गया। कुमार राजवाहन और ये सब मंत्रिपुत्र साथ-साथ खेलते हुए धीरे-धीरे बड़े होने लगे।

मिथिलापति प्रहारवर्मा महाराज राजहंस के बड़े मित्र थे। वह भी उनकी ओर से मालवा के राजा से लड़े थे और हार गए थे। यही नहीं, जब वह अपने देश को लौट रहे थे तो उन्हें भीलों ने लूट लिया। उनके दो जुड़वां बच्चे थे। वे धाय के पास थे। इस भाग-दौड़ में वह पीछे रह गई। वहीं पर एक शेर ने उसपर हमला किया। एक बच्चा धाय के पास था, दूसरा उसकी बेटी के पास। इस हमले में धाय सबसे बिछुड़ गई। उसे बस इतना याद था कि बच्चा उसके हाथ से छूटकर एक मरी हुई गाय के पेट में जा गिरा था और जब शेर उसे खाने को लपका तो किसी ने तीर मारा और शेर मर गया। बच्चे को शायद भील उठा ले गये। दूसरे पुत्र का उसे कुछ पता नहीं था।

एक ब्राह्मण ने जब धाय की यह कथा सुनी तो वह बच्चे को खोजने चला। बच्चा भीलों के पास था। किसी तरह वहां से निकालकर वह उसे महाराज राजहंस को पालन-पोषण करने को दे गया। राजा ने दूसरे मंत्री-पुत्रों की तरह उसके पालन-पोषण की व्यवस्था कर दी। उसका नाम उपहारवर्मा रखा गया। दूसरा राजकुमार जो धाय की बेटी के पास था वह राजा को एक भीलनी क पास मिला। उसे कुछ धन देकर वह उस बच्चे को भी ले आये। उसका नाम उन्होंने अपहारवर्मा रखा और पालन-पोषण के लिए उसे रानी को सौंप दिया।

इसी तरह एक दिन मुनि वामदेव के सोमदव-शर्मा नाम के शिष्य महराज राजहंस के पास एक और बालक लेकर आये। यह सुश्रुत के छोटे भाई रत्नोद्भव का लड़का था। रत्नोद्भव घूमते हुए कालभवन टापू पर पहुंच गए थे। वहां बालगुप्त नाम के बड़े धनवान सौदागर रहते थे। उनकी लड़की का नाम सुवृत्ता था। इसी से रत्नोद्भव का विवाह हुआ। व्यापार में वह चतुर था। बहुत दिन तक खूब धन कमाया। फिर उसे अपने देश और भाइयों की याद आई। वह पत्नी-सहित जहाज में बैठकर चल दिया। मार्ग में जहाज डूब गया। सुवृत्ता धाय की मदद से किसी तरह एक किनारे पर जा लगी। कुछ दिन बाद उसी जंगल में उसने एक लड़के को जन्म दिया। यह वही बच्चा था जो शेर, हाथी और बन्दर के चंगुल में फँसकर भी

बच गया था, लेकिन उसकी मां का कुछ पता नहीं था। न रत्नोद्भव का ही कुछ हाल मालूम था। महाराज ने इस बच्चे को भी रख लिया। उन्होंने उसका नाम पुष्पोद्भव रखा और सुश्रुत को बुलाकर कहा, "देखो, यह तुम्हारे भाई रत्नोद्भव का बच्चा है। इसकी खूब अच्छी तरह देखभाल करो।"

कुछ दिन बाद एक रात को रानी वसुमति के पास एक यक्षिणी आई। वह बहुत सुन्दर थी। उसने कामदेव के समान एक सुन्दर बच्चा रानी को दिया। बोली, "यह तुम्हारे मंत्री धर्मपाल के पुत्र कामपाल का बेटा है। मेरा नाम तारावली है। मैं मणिभद्र की लड़की हूं। आप इसे लें और इसका पालन करें। आपका पुत्र चक्रवर्ती राजा होगा और यह उसकी सेवा करेगा।" यह कहकर वह रुकी नहीं, चली गई। रानी ने सब कथा राजा को सुनाई। राजा बड़े हैरान हुए, पर उन्होंने सुमित्र को बुलाकर बच्चा उसे सौंप दिया। इस लड़के का नाम अर्थपाल रखा गया।

इसके बाद एक दिन एक और विचित्र घटना घटी। ऋषि वामदेव का एक छात्र एक बालक को लेकर महाराज के सामने आया। महाराज से उसने निवेदन किया कि यह बालक आपके मंत्री सितवर्मा के पुत्र सत्यवर्मा की संतान है। सत्यवर्मा तीर्थ करते हुए अग्रहार नाम के एक गांव में जा पहुंचे थे। वहाँ उसने काली नाम की एक ब्राह्मण पुत्री से विवाह कर लिया था। जब उसके कोई पुत्र नहीं हुआ तो सत्यवर्मा ने

काली की छोटी बहन गोरी से शादी कर ली। इस गोरी के एक पुत्र हुआ, परन्तु डाह के कारण बड़ी बहन ने एक दिन गोरी के बच्चे को धाय समेत नदी में धकेल दिया। धाय बहते-बहते एक पेड़ के सहारे किनारे पर जा लगी। पेड़ पर एक सांप था। उसने धाय को काट खाया। लेकिन उसके मरने से पहले वह छात्र वहां पहुंच गया और बच्चे को ले आया। यह कथा सुनकर महाराज को सत्यवर्मा की बड़ी चिन्ता हुई। उन्होंने बच्चे को ले लिया और उसका नाम सोमदत्त रखा गया। इस बालक को महाराज ने सत्यवर्मा के भाई सुमति को बुलाकर सौंप दिया।

इस प्रकार महाराज के मंत्रियों और उनके भाइयों के पुत्रों की एक अच्छी मण्डली जुड़ गई। ये सब साथ-साथ खेलते थे। सबने ऊँची शिक्षा प्राप्त की। सब लिपियां सीखीं। सब वेद, शास्त्र, इतिहास, काव्य, नाटक आदि पढ़े। सब तरह की नीतियां भी उन्होंने सीखीं। गाने-बजाने में प्रवीण हो गए। जादू-टौने के कौशल भी उन्होंने सीखे। घुड़सवारी और शस्त्रविद्या का अभ्यास उन्हें कराया गया। इन सबके साथ उन्हें चोरों की विद्या, जुए में कुशलता आदि तरह-तरह की कपट-कलाओं का अभ्यास भी कराया गया।

धीरे-धीरे वे सब युवा हुए। वे सब काम उत्साह और उमंग से करते थे। आलस उन्हें छू भी नहीं गया था। यह देखकर महाराज को बड़ी खुशी हुई और उन्हें विश्वास हो गया कि अब उनके बैरी उनका कुछ

नहीं बिगाड़ सकते ।

## २. राजवाहन की पाताल-यात्रा

एक दिन किसी काम से ये सब राजकुमार महाराज को घेरे खड़े थे। इसी समय ऋषि वामदेव वहां आये। राजा ने बड़ आदर और भक्ति से उनका स्वागत किया। कुमारों ने भी उन्हें प्रणाम किया । मुनि आशीर्वाद देकर कहने लगे, "हे महाराज, आपके कुमार और उनकी इस मित्र-मंडली को देखकर मुझे बड़ी प्रसन्नता हुई। ये सब कुमार सुशिक्षित, बलवान और सुशील हैं। ये आपकी इच्छा पूरी करेंगे । मेरे विचार से अब अच्छा समय है । राज-वाहन को अपने मंत्रियों को लेकर दिग्विजय आरम्भ कर देनी चाहिए। ये लोग सब तरह के कष्ट और कठि-नाइयां सहन करने तथा बड़े काम पूरे करने के योग्य हो चुके हैं।"

मुनि की यह बात सुनकर राजा ने दिग्विजय की आज्ञा दे दी। बस फिर तो तुरन्त युद्ध की तैयारियां होने लगीं। होने क्या लगीं, पलक मारते ही हवा की-सी तेजी और फुर्ती के साथ, सब काम पूरा हो गया। उनकी तैयारी देखकर राजहंस को बड़ा भरोसा हुआ और उन्होंने सबको समझा-बुझाकर विदा दी। वे लोग रास्ते में तरह-तरह की घटनाएं देखते हुए आगे बढ़ने लगे । एक स्थान पर राजवाहन को ऐसा मनुष्य मिला जो लोहे-जैसा कठोर और काला था। उसके शरीर पर हथियार चलाने के निशानों के साथ-साथ जनेऊ भी लटक

रहा था। समझ में नहीं आता था कि वह क्षत्रिय था या ब्राह्मण ! इस रहस्यमय आदमी ने राजकुमार को अपनी रामकहानी सुनाते हुए कहा, "मैं उस ब्राह्मण-वंश का हूं जो भीलों के साथ रहते हैं और अपना कुलधर्म भूल चुके हैं। मैं भी भीलों के साथ लोगों को लूटा करता था। लेकिन एक बार एक ब्राह्मण पर मुझे दया आ गई। मैंने भीलों का विरोध किया, लेकिन वे नहीं माने। लड़ाई में उन्होंने मुझे मार डाला ।

"ब्राह्मण की रक्षा में प्राण देने के कारण यमराज ने मेरी बुद्धि बदलकर मुझे फिर धरती पर भेज दिया। मैं फिर अपनी पुरानी देह में लौट आया। यहां एक और ब्राह्मण ने मेरी देखभाल की। मुझे शास्त्रों की शिक्षा दी। मैं सुधर गया।" इस ब्राह्मण का नाम मातंग था। इसने राजकुमार को अकेले में ले जाकर बताया कि कैसे शिवजी ने उसे दर्शन देकर पाताल जाने की आज्ञा दी है। वह पाताल का राजा बनेगा, और इस काम में जो राजकुमार मदद करेगा, वह आजकल में आनेवाला है।

यह कहकर मातंग ने राजकुमार से सहायता की प्रार्थना की। राजकुमार सारी कथा सुनकर शायद दैव-गति समझ गए और सहायता के लिए तैयार हो गए।

रान को जब सब सो गए तो राजकुमार चुपचाप मातंग के साथ चल दिये। वह राजवाहन को शिव के बताये मार्ग से पातालपुरी ले गया। वहां जाकर मातंग ने एक यज्ञ किया और अपना शरीर अग्नि में डाल दिया। राजकुमार पहले तो यह सब देखकर घबराये;

किन्तु थोड़ी देर में उन्होंने देखा कि मातंग दिव्य देह धारण कर कुंड के बाहर निकल आया है। उसी समय एक बड़ी रूपवती कन्या अपनी सहेलियों के साथ वहां आई। उस कन्या ने एक हीरा मातंग को भेंट किया और कहने लगी, "हे ब्राह्मण श्रेष्ठ, मैं असुरों के राजा की लड़की कालिन्दी हूं। मेरे पिता देवताओं से युद्ध में लड़कर मारे गए। मैं बहुत दुखी हुई तो एक महात्मा ने मुझे ढाढ़स बंधाया और कहा कि आपके समान लक्षणों वाला एक अजनबी पुरुष पाताल-लोक में आयगा और यहां का राजा बनेगा। वही पुरुष आपका पति भी बनेगा। सो अब आप यहां का राज संभालिये और मुझे भी चरणों की दासी बनाइये।" यह सुनकर मातंग ने राजवाहन की आज्ञा से कन्या से विधिपूर्वक विवाह कर लिया। और इसके बाद बड़े आनन्द से वहां का राज-काज चलाने लगा। राजवाहन को भी घर की याद आई। कालिन्दी ने मातंग को भूख-प्यास मिटानेवाली एक मणि भेंट में दी थी। वही मणि मातंग ने राजकुमार को दे दी और बड़े प्रेम से उसे विदा किया।

अपने स्थान पर आकर राजवाहन ने देखा कि वहां न तो उनकी मित्रमंडली है, न सेना। वे सब उनके गायब हो जाने के बाद उन्हें ढूंढ़ने चले गए थे। अब राजकुमार उनकी तलाश में इधर-उधर घूमने लगे। वह शिला नाम की एक नगरी में पहुंचे। वहां उन्हें एक सुन्दर बाग दिखाई दिया। उस बाग में घुसकर राज-

कुमार एक सुपारी के पेड़ के नीचे बैठकर सुस्ताने लगे।

इतने में राजवाहन ने डोली में किसी को आते देखा। उस डोली में दो स्त्री-पुरुष बैठे थे। डोली वाला आदमी राजवाहन को देखते ही प्रसन्नता से नाच उठा। वह बाहर निकला और उसने राजवाहन के पैर छुए। राजवाहन अब उसे पहचान गए। उनके मुँह से निकला, "ओह, प्रिय सोमदत्त, तुम हो।" यह कहकर राजवाहन ने उसे गले से लगा लिया। दोनों मित्रों की आँखों में आनन्द के आँसू छलक आये।

इसके बाद राजवाहन ने सोमदत्त से सब हालचाल पूछे। उत्तर में सोमदत्त हाथ जोड़कर अपनी कहानी सुनाने लगे।

## ३. सोमदत्त की आपबीती

सोमदत्त कहने लगे, "राजकुमार, जब आप गायब हो गए तब हम सब राजमंत्री अलग-अलग दिशाओं में आपका पता लगाने चल दिए।

"मैं चलते-चलते एक तालाब के पास पहुंचा। गरमी के दिन थे और मैं प्यास के कारण बेचैन हो रहा था, लेकिन मैंने जैसे ही पानी पीने के लिए हाथ बढ़ाया तो एक कीमती हीरा दिखाई दिया। मैंने उसे निकाल लिया। आगे चलकर एक दीन ब्राह्मण की कुटी पर आया। यहां पर पता लगा कि मैं वीरकेतु राजा के राज्य में आ गया हूँ। इस राजा को लाट देश के राजा मत्तकाल ने घेर लिया था, क्योंकि उसने अपनी सुन्दरी

कन्या उसे देने से इन्कार कर दिया था, लेकिन अब लाचार होकर उसे अपनी कन्या वामलोचना मत्तकाल को देनी पड़ी। लौटते हुए वह शिकार करने को इस जंगल में रुक गया है। उधर वीरकेतु का मंत्री राजा के अपमान से बड़ा दुखी हुआ। वह राज्य की सारी सेना लेकर दूसरी जगह चला गया। अब वह मत्तकाल के विरुद्ध तोड़फोड़ के सामान तैयार कर रहा है।

"यह कथा सुनकर मुझे सब बातों का पता लग गया। मैंने वह हीरा तरस खाकर उस ब्राह्मण को दे दिया और थकान के कारण सो गया। ब्राह्मण वह हीरा पाकर बड़ा खुश हुआ और वहां से चला गया। जब मैं सोकर उठा तो देखा कि उस ब्राह्मण को कुछ सैनिक बांध कर ला रहे थे। उसपर हीरे की चोरी का आरोप था। उन्हें जब यह बताया कि हीरा मैंने दिया था तो सिपाहियों ने ब्राह्मण को छोड़ दिया और मुझे बांध लिया। वे मत्तकाल के सिपाही थे। मुझे उन लोगों ने जेल में डाल दिया। वहां वीरकेतु के मंत्री मानपाल के भी कुछ आदमी कैद थे। मैंने उनसे दोस्ती कर ली। और सुरंग खोद कर उनके साथ निकल भागा। हम सब मंत्री मानपाल के पास पहुँचे। मत्तकाल को जब इन बातों का पता लगा तो उसने हमें वापिस मांगा, लेकिन मंत्री मानपाल ने मना कर दिया। फिर क्या था, लड़ाई ठन गई। मानपाल युद्ध में जीत गए और मत्तकाल मारा गया। इस जीत का समाचार जब वीरकेतु राजा के पास पहुँचा तब वहां बहुत आनन्द मनाया गया। मेरा

बहुत सत्कार किया गया। वीरकेतु ने अपनी कन्या कुमारी वामलोचना का विवाह मेरे साथ कर दिया। राजा के कोई और सन्तान न थी। इसलिए उत्तराधिकारी मुझे बनाया। मैंने भी अपनी ओर से राजा की सेवा करने में कोई कसर नहीं रखी। इस प्रकार बहुत दिन तक आनन्द करता रहा।

"किन्तु, हे राजकुमार, आपकी याद आते ही मैं व्याकुल हो जाता था। आज मैं एक महात्मा के उपदेश स यहां शिवजी की पूजा करने आया था। यहां आना ऐसा शुभ हुआ कि आपसे भेंट हो गई।"

यह कथा सुनकर कुमार राजवाहन ने साथी सोम-दत्त की चतुराई और वीरता की बड़ी सराहना की और अपनी पाताल-यात्रा का रोचक हाल सुनाया इसी समय उनके एक और साथी पुष्पोद्भव वहां आ गये। फिर तो वे सब बड़े प्रेम से आपस में मिले।

अपना हाल सुनाकर राजकुमार राजवाहन ने पुष्पोद्भव से पूछा, "अब तुम बतलाओ कि कहां-कहां गये थे ?" पुष्पोद्भव ने बड़ी नम्रता से हाथ जोड़े और अपना हाल सुनाने लग।

## ४. पुष्पोद्भव की आपबीती

पुष्पोद्भव ने कहना शुरू किया, "कुमार, आपको जिस समय वह ब्राह्मण एकान्त में ले गया था, तभी हम लोगों को खटका हुआ था। जब आपका पता नहीं लगा तब हम लोग समझ गए कि आप उसीके काम से कहीं

चले गये हैं। लेकिन हम यह नहीं जानते थे कि आप किधर गये हैं, इसलिए हमने तय किया कि आपको खोजने के लिए एक-एक व्यक्ति एक-एक दिशा में जाय।

मैं भी एक ओर चला। चलते-चलते थककर मैं एक पहाड़ की तराई में एक पेड़ की छाँह में बैठ गया। अभी कुछ देर ही बैठा था कि देखता क्या हू कि ऊपर से एक आदमी गिरता आ रहा है। मैंने तुरन्त उसे अपने हाथों में ले लिया। वह बेहोश हो गया था। जब होश में आया तो बोला, "भाई, मैं मगध-नरेश के मंत्री पद्मोद्‌भव का पुत्र हूं। मेरा नाम रत्नोद्‌भव है। मैं रोजगार के सिलसिले में कालयवन द्वीप चला गया था। वहां एक सौदागर की लड़की से विवाह हो गया। कुछ दिन बाद जब मैं जहाज से घर लौटने लगा तो जहाज एक भयानक तूफान में डूब गया। भाग्य से मैं जैसे-तैसे किनारे आ लगा। किन्तु पत्नी के डूब जान के कारण मैं बहुत दुखी था। इसी बीच में एक साधु ने बताया कि सोलह वर्ष बाद मेरा दुख दूर होगा। मैंने इसी आशा में सोलह वर्ष काट दिये। लेकिन फिर भी कोई आशा नहीं दिखाई दी तो मैं निराश होकर इस पहाड़ पर से कूद पड़ा।"

इतनी रामकहानी सुनने के बाद सहसा मुझे किसी स्त्री का रोना-बिलखना सुनाई पड़ा। वहां जाकर देखा कि एक वृद्धा उस स्त्री को आग में जलने से रोक रही है। पूछने पर उसने बताया कि वह उस स्त्री की धाय है और वह युवती सौदागर रत्नोद्‌भव की पत्नी सुवृत्ता है। उसने जो कहानी सुनाई उससे मैं समझ गया कि सुवृत्ता

अन्य कोई स्त्री नहीं, मेरी मां है। मैंने तुरन्त पैर छूकर उनको प्रणाम किया। और सबको ले जाकर पिताजी से भेंट कराई। सब बड़े प्रसन्न हुए। मुझे तो उन्होंने बहुत ही प्यार किया। उसके बाद मैंने उन्हें सब कहानी सुनाई और फिर उन्हें एक ऋषि के आश्रम में ठहराने का प्रबन्ध कर आपको ढूंढ़ने निकला। मैंने कुछ साथी इकट्ठे किये और साधु का वेश बनाकर खोजने लगा। मैंने करामाती सुरमे की मदद से धरती में से ढेरों अशर्फियां निकालीं और घूमते-घूमते उज्जैन पहुँच गया। वहां बन्धुपाल नाम के सौदागर के यहां रहने लगा। यहां बालचन्द्रिका नाम की एक वैश्य की लड़की से मिलना हुआ। वह मालवा के राजा मानसार की लड़की की सहेली थी। राजा के बड़े लड़के दर्पसार तप करने कहीं चले गये थे और राजकाज उनके फुफेरे भाई चंडवर्मा और दारूवर्मा देखते थे। वे बड़े आवारा थे। दारूवर्मा की निगाह बालचन्द्रिका पर थी। वह उसे बहुत तंग करता था। इससे बालचन्द्रिका बहुत दुखी थी। बहुत सोच-विचार कर मैंने बालचन्द्रिका से कहा कि नगर में यह बात फैला दी जाय कि राजकुमारी की सहेली बालचन्द्रिका पर यक्ष आता है। उस यक्ष से जो पार पा सकेगा उसी से बालचन्द्रिका का विवाह हो सकेगा। यह बात सुनकर दारूवर्मा यदि डर गया तो ठीक होगा। अगर बल के घमंड में वह उसे बुलावेगा तो मैं उसे मार डालूंगा।

"मेरी यह योजना सफल रही। दारूवर्मा ने बाल-चन्द्रिका को बुला भेजा। मैं भी स्त्री के वेश में उसके

साथ गया और वहां मैंने दारूवर्मा को मार डाला। अब तो नगर में यह बात फैल गई कि बुरे काम का नतीजा बुरा होता है। बाद में मेरा विवाह बालचन्द्रिका के साथ हो गया।"

यह कहानी सुनाकर पुष्पोद्भव ने कहा, "बन्धुपाल ने जैसा शकुन विचारा था उसीके अनुसार मैं इधर आया तो आपसे भेंट हो गई। मुझे अब जितनी खुशी हो रही है उसका वर्णन नहीं कर सकता।"

इस मिलन पर राजकुमार भी बहुत प्रसन्न हुए और सोमदत्त को शिवजी की पूजा के लिए भेजकर पुष्पोद्भव के साथ अवन्ती चले गये। पुष्पोद्भव ने राजकुमार का सबसे परिचय कराया और उन्हें ब्राह्मण-पुत्र प्रसिद्ध किया। वे आराम से वहां रहने लगे।

## ५. राजवाहन और अवन्तिसुन्दरी

कुछ दिनों बाद धीरे-धीरे वसन्त ऋतु आ गई। लोगों के मन में तरह-तरह की उमंगें उठने लगीं। स्त्री-पुरुषों में ही नहीं, पेड़ और पौधों में भी परिवर्त्तन होने लगे। निर्गुण्डी, लाल, अशोक, टेसू और तिलों में कोंपलें तथा नई कलियाँ निकल आईं। इन नई कोंपलों तथा आम के बौर का स्वाद ले-लेकर कोयलों और भौरों की आवाज और भी सुरीली हो उठी। इनकी कूक तथा गुंजार बड़ी साफ और ऊँची हो गई।

सुना जाता है कि दक्षिण में मलय पहाड़ है। इस पर चन्दन के पेड़ बहुत उगते हैं। इन चन्दन वृक्षों

पर सुगन्धि के कारण हमेशा सांप लिपटे रहते हैं। ये सांप चन्दन की महक से भरी हुई यहां की हवा को पी-पीकर उगला करते हैं। शायद इसीलिए दक्षिणी बयार इतनी पतली और महीन पड़ कर बह रही थी।

इन्हीं दिनों एक बार मालवराज मानसार की पुत्री अवन्तिसुन्दरी भी आनन्द-विहार के लिए निकली। वह नगर के बाहर एक बहुत सुन्दर बगीचे में आई। उसकी प्यारी सहेली बालचन्द्रिका उसके साथ थी। उन दिनों वसन्त ऋतु में कामदेव की पूजा का आम रिवाज था। क्वारी लड़कियां यह पूजन बड़े चाव से किया करती थीं। राजकुमारी ने भी विधिपूर्वक कामदेव की पूजा की। इसके बाद वह खेलकूद और घूमने-फिरने में लग गई।

राजवाहन ने पुष्पोद्भव से कहा कि चलो, हम लोग भी राजकुमारी को देख आवें। पुष्पोद्भव तैयार हो गया। दोनों मित्र थोड़ी देर में बाग में पहुँच गए। बालचन्द्रिका ने इन लोगों को देखा तो बेखटके उधर ही चले आने का संकेत कर दिया। वे दोनों राजकुमारी और उनकी सहेलियों की तरफ बढ़ चले। दोनों ने एक-दूसरे को देखा। दोनों बहुत सुन्दर थे। नतीजा यह हुआ कि दोनों एक दूसरे की तरफ खिचे। समय पाकर बालचन्द्रिका ने अवन्तिसुन्दरी से कहा, "राजकुमारी, यह जो महानुभाव सामने खड़े हैं, एक ब्राह्मण युवक हैं। यह तरह-तरह के कला-कौशल और शिल्प के जान-कार हैं। रत्न परखने में निपुण हैं। तन्त्र और चिकित्सा-

शास्त्र के पंडित हैं। आपको इनका आदर करना चाहिए।" राजकुमारी ने तुरन्त एक सुन्दर आसन बिछा दिया और विधिपूर्वक राजकुमार का सत्कार किया। राजकुमार का मन बराबर राजकुमारी की ओर खिंच रहा था। वह सोचने लगे कि ऐसा क्यों हो रहा है। तभी सहसा उन्हें पिछले जन्म की याद आ गई। वह राजा शाम्ब थे और राजकुमारी उनकी पत्नी यज्ञवती थी। एक बार रानी के कहने पर उन्होने एक हंस को पकड़कर उसके पैर बांध दिये थे। वह हंस एक ऋषि थे। उन्होंने राजा को शाप दिया, 'तुमने बिना कारण हमारा अपमान किया है। तुम पापी हो। जाओ, तुम्हारी स्त्री तुमसे अलग हो जायगी।' राजा के बहुत क्षमा-प्रार्थना करने पर ऋषि को दया आ गई। उन्होंने कहा, 'तुमने बुरे इरादे से हमें नहीं बांधा, सो इस जन्म में तुम्हें शाप का फल नहीं भोगना पड़ेगा। हां, अगले जन्म में दो महीने तक तुम्हारे पैर बंधेंगे। उसके बाद तुम्हारी स्त्री तुम्हें मिल जायगी।'

यह कथा याद आते ही राजकुमार समझ गए कि यह राजकुमारी मेरे पहले जन्म की पत्नी यज्ञवती है। उन्होंने राजकुमारी से भी यह बात कही। उसे भी सब बातें याद आ गईं। अब तो दोनों एक-दूसरे को प्रेम करने लगे। लेकिन तभी राजकुमारी की माता के आने का समाचार मिला। वे वहां से चले गये।

बाद में कुछ समय तक बालचन्द्रिका के सहारे दोनों में पत्र-व्यवहार चलता रहा। लेकिन इस बीच

उनकी अवस्था बड़ी विचित्र हो गई । पुष्पोद्भव उनको राजकुमारी से मिलाने की बात सोचने लगा । थोड़े दिन बाद एक जादूगर अवन्तिका में आया और उसकी जादूगरी की प्रसिद्धि नगर भर में फैल गई ।

मालवपति ने भी जादूगर को राजमहल में अपने करतब दिखाने के लिए बुलाया । इससे पहले ही पुष्पोद्-भव जादूगर से मिले और सब बातें उसे समझा दीं । जादूगर ने उन्हें विश्वास दिलाया कि वह राजकुमार को अवन्तिसुन्दरी से मिला देगा । महल में उसने अनेक तमाशे दिखलाए और बाद में एक ऐसा खेल दिखाया, जिसमें अवन्तिसुन्दरी का विवाह राजवाहन के साथ होता हुआ सब दर्शकों ने देखा । वे सोचने लगे कि यह सब जादू है । किन्तु यह सब थी वास्तविक घटना और जैसा कि पहले से तय हो चुका था, राजकुमार राजवाहन धीरे-से राजकुमारी के साथ भीतर के महल में चले गये और आनन्द से रहने लगे । किसी को असली बात का पता ही नहीं लगा ।

## ६. राजवाहन पर क्या बीती

बहुत दिन तक राजकुमार सुखपूर्वक महल में रहते रहे, लेकिन एक दिन सब भेद खुल गया और चंडवर्मा ने राजकुमार को जेल में डाल दिया । जब राजकुमारी के माता-पिता को पता लगा कि उनका दामाद बड़ा सुन्दर है तो वे उसकी ओर हो गए । उनके बीच में पड़ने से राजकुमार के प्राण बच गए, लेकिन

चंडवर्मा उन्हें अपने साथ अंग देश ले गया। वह अंग-देश के राजा सिंहवर्मा की बेटी अम्बालिका से विवाह करना चाहता था, पर राजा नहीं माने। वह सेना लेकर चढ़ आया। उस युद्ध में सिंहवर्मा हार गये और अम्बालिका चंडवर्मा के हाथ में पड़ गई। तभी अवन्तिसुन्दरी के भाई महाराज दर्पसार का संदेश चंडवर्मा को मिला। उन्होंने राजवाहन को मार डालने और राजकुमारी को कैद में डालने की आज्ञा दी थी। चंडवर्मा ने राजकुमार को हाथी से कुचलवा देने की आज्ञा दी। लेकिन इसी बीच एक अद्‌भुत घटना घटी। राजकुमार के पैरों में जो जंजीर थी वह आप-से-आप टूट गई। दो महीने बीत चुके थे और पूर्व-जन्म का श्राप पूरा हो चुका था। वह जंजीर भी एक परी थी और श्राप के कारण जंजीर बनी हुई थी। अपनी कहानी सुनाकर वह राजकुमारी को सब समाचार देने चली गई। तभी पता लगा कि किसी व्यक्ति ने चंडवर्मा को मार डाला। भीतर-बाहर हलचल मच गई। इसी घपले में राजवाहन भी जेल से बाहर निकल आए। वहां उन्हें पता चला कि चंडवर्मा को मारनेवाला व्यक्ति अपहारवर्मा है तो वह बेहद प्रसन्न हुए।

इसी समय एक सेना ने चंडवर्मा की सेना को बाहर से आकर घेर लिया। अपहारवर्मा ने राजकुमार को बतलाया कि मेरे मित्र धनमित्र की सहायता से अंगराज सिंहवर्मा के सहायक राजाओं की सेना चंडवर्मा से टक्कर ले सकी है। अन्त में चंडवर्मा की

सेना हार गई और अपहारवर्मा राजवाहन को चम्पा-नगरी के बाहर एक स्थान पर ले गया। वहां पहुंच-कर दोनों महारथी बैठे ही थे कि उन्होंने धनमित्र को आते हुए देखा। उसके पीछे-पीछे उपहारवर्मा, अर्थपाल, प्रमति, मित्रगुप्त, मंत्रगुप्त, और विश्रुत भी आ गए। साथ ही मिथिला के प्रहारवर्मा, काशीराज, कामपाल तथा चंपा-नरेश सिंहवर्मा भी उपस्थित थे। राजवाहन उन सबको देखकर बहुत खुश हुए। उन्होंने सबका आदर किया और बड़े प्रेम से सबसे मिले। इस मिलन के बाद राजवाहन ने अपना हाल सबको सुनाया। फिर सोमदत्त और पुष्पोद्भव की आपबीती भी सुना डाली। इसके बाद वह एक-एक करके सब साथियों का हाल पूछने लगे। इनमें सबसे पहले अपहारवर्मा ने अपनी कहानी सुनानी शुरू की।

## ७. अपहारवर्मा की आपबीती

अपहारवर्मा ने कहा, "आपको ढूंढ़ते-ढूंढ़ते मैं गंगा-किनारे आम के पेड़ के नीचे बैठे एक बाबाजी के पास जा पहुँचा। मुझे मरीचि ऋषि की तलाश थी, क्योंकि वह दिव्य दृष्टि से आपका पता बता सकते थे। उस महात्मा की दशा कुछ अजीब-सी थी। दिमाग कुछ बिगड़ गया था, पर उन्होंने मेरा स्वागत किया और जब मैंने उनसे मरीचि ऋषि का पता पूछा तो वह बोले, "अंग देश में काममंजरी नाम की एक सुन्दर वेश्या रहती थी। उससे एक दूसरी वेश्या ईर्ष्या

करती थी। एक दिन बातों-ही-बातों में वह काममंजरी से बोली कि तू तो ऐसी शेखी मार रही है जैसे 'मरीचि' को फंदे में फाँस लाई हो। बस, इसी मामले में दोनों में शर्त लग गई। फिर क्या था, यह काममंजरी अपनी मां के साथ एक दिन मरीचि के पास गई और फूट-फूट कर रोने लगी। मां बोली, महाराज, यह मेरी लड़की है। मैं इसे वेश्या के काम में चतुर बनाना चाहती हूं, किन्तु यह तपस्वियों का जीवन बिताना चाहती है। असल में यह एक गरीब ब्राह्मण से प्रेम करती है, लेकिन हम गरीबों से प्रेम करने लगें तो कैसे चले। इसलिए जब मैंने इसे उससे मिलने से रोका तो यह रूठ गई और यहां वनवास के लिए भाग आई।"

"यह सब हाल सुनकर मरीचि को उन लोगों पर बड़ी दया आई। उन्होंने उस वेश्या की लड़की को बहुत समझाया। बोले, 'जंगल में रहना और तप करना तेरे बूते का काम नहीं है। इसे रहने दे। तेरे लिए तो यही ठीक है कि तू अपनी मां का कहना मान।'

"उनकी यह बात सुनकर वह वेश्या की लड़की बड़ी दुखी हुई और बोली, 'भगवन्, अगर आज यहां जंगल में आपके चरणों का आसरा मुझे न मिला, तो मैं जल मरूंगी।' इसपर मुनि कुछ सोच में पड़ गए। थोड़ी देर बाद उसकी मां से बोले, "अच्छी बात है, तुम इस समय तो घर लौट जाओ। कुछ दिनों में यह लड़की समझ जायगी कि तप का जीवन बिताना आसान काम नहीं है। मैं भी इसे समझाता रहूंगा।"

उनके जाने के बाद काममंजरी ने अपनी देह को सजाना छोड़ दिया। वह बड़े भक्तिभाव से वहां रहने लगी। उसके दिन भजन-चिन्तन में बीतने लगे। अपने ज्ञान के अनुसार वह शास्त्र और आत्मा-परमात्मा के बारे में भी चर्चा किया करती थी। आश्रम के सब काम उसने संभाल लिये थे। मरीचि भी इस प्रकार की वृत्ति से और कामकाज में लगन के कारण उससे संतुष्ट रहने लगे। धीरे-धीरे उसकी ओर उनका ध्यान विशेष रूप से जाने लगा। वह लड़की भी इस बात को ताड़ गई और उसने ऋषि को अपनी ओर खींचने का पूरा प्रयत्न किया। परिणाम यह हुआ कि धर्म, अर्थ और काम की चर्चा करते-करते मरीचि ऋषि एक दिन उस वेश्या के जाल में फंस गए। जब वह पूरी तरह काममंजरी के इशारों पर नाचने लगे तो एक दिन वह उन्हें लेकर काम महोत्सव में गई। तब वह विलासी के समान बने-ठने हुए थे। वहां काममंजरी ने अपने से ईर्ष्या करनेवाली वेश्या से कहा कि देख, मैंने मरीचि को बस में किया है। मरीचि ऋषि यही हैं। राजा काममंजरी की इस विजय से बड़े प्रसन्न हुए और दूसरी वेश्या तो उसकी बांदी बन गई।

"वहां से घर लौट कर काममंजरी ऋषि से बोली, 'भगवन्, आपने दासी पर बड़ी कृपा की। अच्छा, यह तमाशा खत्म हुआ। अब मुझे अपने काम-काज में लगने दीजिए।"

"यह सुनकर ऋषि को बहुत दुःख हुआ। वह सब बात

जान गए थे। पछताते हुए अपने आश्रम में लौट आये।"

यह कथा सुनाकर बाबा बोले, "महानुभाव, उस वेश्या ने जिस तपस्वी को ऐसा मूर्ख बनाया था, वह मैं ही हूं। मैं अब ठीक राह पर आ गया हूं। शीघ्र ही आपका काम करने योग्य हो जाऊँगा। तबतक आप चम्पा नगरी में निवास करें।"

"मैं मरीचि की कहानी सुनकर आगे बढ़ा। एक बगीचे में बने विहार के पास लाल अशोक के पेड़ के नीचे मैंने एक जैन साधु को देखा। पूछने पर पता लगा कि यह जैन साधु निधिपाल का पुत्र वसुपालित है। इसे भी काममंजरी ने अपने रूपजाल में फँसा कर कंगाल बनाया और फिर निकाल दिया। जैन बनने पर भी हृदय को शान्ति नहीं मिली। उसे जैनों में ब्रह्मा, विष्णु, महेश, अग्नि, वरुण की निन्दा सुननी पड़ती थी। इससे उसे बड़ा दुःख होता था।

"मैंने उसे ढाढ़स बंधाया और विश्वास दिलाया कि एक दिन वही वेश्या उसका सब धन लौटाने आवेगी और मैं आगे बढ़ गया। चम्पा नगरी में जाकर मैंने वहाँ के धनवान व्यक्तियों की रीति-नीति का पता लगाया। वे धनी थे, पर कंजूस बहुत थे। सब लोग उनसे तंग थे। इन कंजूस वणिकों को ठीक मार्ग पर लाने के लिए मैं चौर्यशास्त्र के आचार्य कर्णीसुत के अनुसार जुओं के अड्डों पर जाने लगा और पांसे के उस्ताद जुआरियों की सोहबत में मैंने बैठना शुरू किया। धीरे-धीरे जुए की सब चालबाजियां मैंने जान लीं और जुआ खेलने की

असली कला सीख ली। जुए के इन अड्डों में मुझे बड़ा आनन्द मिलने लगा। मुझे जुए का चस्का लगाने वाले आदमी का नाम विमर्दक था। यह बड़ा भरोसे का आदमी था। उसे मेरा जिगरी दोस्त समझिए। इस विमर्दक के द्वारा ही चम्पा का सब अन्दरूनी हाल मुझे मालूम हुआ। शहर में कहां-कहां क्या-क्या काम होते हैं, यह सब उसी से पता लगता था। मतलब यह कि शहर और यहां के आदमियों से अब मैं अच्छी तरह परिचित हो गया।

"इसके बाद में चोरी करने निकला। पहली ही रात को मेरा मिलना कुबेरदत्त नाम के रईस की बेटी से हुआ। बचपन में जिस व्यक्ति से उसकी शादी तय हुई थी वह अब गरीब हो चुका था। इसलिए उसके पिता ने उसका विवाह अर्थपति नाम के मनहूस मालदार से करने का निश्चय किया था। वह नारी पहले युवक को चाहती थी और उसी के पास जाने को घर से निकली थी। मुझे देखकर वह डर गई, पर मैंने उसकी सहायता की और पुलिस से बचाता हुआ उसे उसके मनोनीत पति उदारक या धनमित्र के घर पहुँचा आया। यही नहीं, मैंने इस प्रकार की चालें चलीं, जिससे धनमित्र की फिर से प्रतिष्ठा होने लगी। राजा भी उसे मानने लगा और कुबेरदत्त ने भी धनमित्र को अमीर समझ उसी से अपनी बेटी का विवाह करने की इच्छा फिर से प्रकट की।

"इसी बीच मेरा मिलना काममंजरी की बहन

रागमंजरी से हुआ। वह वेश्या की बेटी होकर भी बड़ी सच्चरित और कलाविद् थी। मैं उससे विवाह करना चाहता था, पर उसकी मां और बहन काममंजरी ने रुकावटें डालीं। मैंने जिस 'जादू के बटुए' का ढोंग रचकर धनमित्र को धनी प्रसिद्ध किया था उसी की रिश्वत देकर काममंजरी और उसकी माँ को चुप किया और रागमंजरी से शादी कर ली।

"इसके बाद मैं अर्थपति के विरुद्ध वातावरण बनाने लगा और उसपर बटुए की चोरी का आरोप लगा कर उसे जेल में डलवा दिया। बटुआ काममंजरी के पास था। उसे बताया गया कि यह बटुआ तभी धन देता है जब चोरी और छल से प्राप्त धन उसके मालिक को लौटा दिया जाय। काममंजरी ने जैन साधु विरूपक का सब धन लौटा दिया। यही नहीं, शेष धन भी उसने दान कर दिया। वह गरीब हो गई। तभी मैंने राजा के पास शिकायत की कि बटुआ अब काममंजरी के पास पहुँच गया है। तभी तो वह इतना दान कर रही है। इधर मैं काममंजरी से भी मिला रहा और उससे राजा के सामने कहलवा दिया कि यह बटुआ अर्थपति ने उसे दिया था। राजा अर्थ-पति को प्राणदण्ड देने को तैयार हो गए, पर बाद में धनमित्र के कहने पर उसकी सम्पत्ति जब्त कर उसे देश से निकाल दिया गया। अब धनमित्र का विवाह कुबेरदत्त की लड़की के साथ बिना किसी विघ्न-बाधा के हो गया।

"लेकिन अभी मेरी कथा का अन्त नहीं हुआ।

## 'संस्कृत साहित्य सौरभ' की पुस्तकें



१४

छः आना